॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

मान्त्रिक उपनिषद

विषय सूची

॥अथ मन्त्रिकोपनिषत् ॥ 3
मान्त्रिक उपनिषद 4
शान्तिपाठ 11

॥ श्री हरि ॥

॥अथ मन्त्रिकोपनिषत् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

स्वाविद्याद्वयतत्कार्यापह्नवज्ञानभासुरम् ।
मन्त्रिकोपनिषद्वेद्यं रामचन्द्रमहं भजे ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

वह परब्रह्म पूर्ण है और वह जगत ब्रह्म भी पूर्ण है, पूर्णता से ही पूर्ण उत्पन्न होता है। यह कार्यात्मक पूर्ण कारणात्मक पूर्ण से ही उत्पन्न होता है। उस पूर्ण की पूर्णता को लेकर यह पूर्ण ही शेष रहता है।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ मन्त्रिकोपनिषत् ॥

मान्त्रिक उपनिषद

ॐ अष्टपादं शुचिं हंसं त्रिसूत्रमणुमव्ययम् ।
त्रिवर्त्मानं तेजसोहं सर्वतःपश्यन्न पश्यति ॥ १॥

आठ चरणों वाले, पवित्र स्वरूप, हंस (परमात्मा) रूप, त्रिसूत्र (व्यष्टि, समष्टि, तदुभय) रूप, अतिसूक्ष्म, अव्यय और देदीप्यमान उस परमात्म चेतना को हम (भक्ति, ज्ञान, कर्म) तीन मार्गों से सर्वत्र अनुभव करते हैं; परन्तु देख नहीं पाते ॥ १ ॥

भूतसंमोहने काले भिन्ने तमसि वैखरे ।
अन्तः पश्यन्ति सत्त्वस्था निर्गुणं गुणगह्वरे ॥ २॥

यद्यपि वह परमात्म चेतना निर्गुण है, तो भी वह गुण रूपी गुहा में समाया हुआ है। सामान्य पुरुष मोहादि से सम्मोहित अवस्थाजन्य अन्धकार में निमग्न रहते हैं; परन्तु सात्त्विक गुणों में अवस्थित रहने वाले पुरुष उसे अपने अन्त:करण में देखते हैं ॥ २॥

अशक्यः सोऽन्यथा द्रष्टुं ध्यायमानः कुमारकैः ।
विकारजननीमज्ञामष्टरूपामजां ध्रुवाम् ॥ ३॥

अन्य किसी प्रकार से भी ध्यान किया जाए, तो भी उस परमात्म चेतना को अज्ञानी पुरुष नहीं देख सकते, क्योंकि जगत् में विकारों को जन्म देने वाली, अज्ञान रूप वाली, आठरूप वाली (पंचभूत, मन, बुद्धि, अहंकार), अजन्मा (प्रकृति रूप) माया का प्रभाव अविचल रहता है ॥ ३ ॥

ध्यायतेऽध्यासिता तेन तन्यते प्रेर्यते पुनः ।
सूयते पुरुषार्थं च तेनैवाधिष्ठितं जगत् ॥ ४॥

ध्यान (चिन्तन) के द्वारा ही उस माया के ज्ञान की प्राप्ति होती है। उसी (माया) के द्वारा यह (आध्यात्मिक-जीव) विस्तार को प्राप्त होता है और (बन्धन से मुक्त होने के लिए) प्रेरित होता है। वस्तुतः पुरुष जो (आध्यात्मिक) पुरुषार्थ करता है, उसी पुरुषार्थ के द्वारा यह जगत् अधिष्ठित है ॥ ४ ॥

गौरनाद्यन्तवती सा जनित्री भूतभाविनी ।
सितासिता च रक्ता च सर्वकामदुधा विभोः ॥ ५॥

यह गौरूपी माया उत्पत्ति और प्रलय से युक्त है, सबकी सहायिका है, प्राणि-मात्र की पोषिका है। यह श्वेत, कृष्ण और रक्तवर्णा (सत्, रज, तम) है तथा सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाली है ॥ ५ ॥

पिबन्त्येनामविषयामविज्ञातां कुमारकाः ।
एकस्तु पिबते देवः स्वच्छन्दोऽत्र वशानुगः ॥ ६॥

सभी जीव (कुमार) इस माया रूपी गौ के पय का दोहन करते हैं; परन्तु वह परम पुरुष इस माया के विषयों से भिन्न और अविज्ञात है, वह स्वयं स्वच्छन्द रहकर, सभी प्राणियों को वश में रखकर अकेला ही (सम्पूर्ण प्राणियों में-आत्म रूप में) माया का पय:पान (निर्लिप्त रहकर) करता है ॥ ६ ॥

ध्यानक्रियाभ्यां भगवान्भुङ्क्तेऽसौ प्रसहद्विभुः ।
सर्वसाधारणीं दोग्ध्रीं पीयमानां तु यज्वमिः ॥ ७॥

सर्व साधारण द्वारा दुही जाती और याज्ञिकों द्वारा यजन की जाती हुई इस माया रूपी गौ का वह भगवान् (ऐश्वर्यशाली) ध्यान (चिन्तन) और क्रिया (यौगिक क्रिया) द्वारा उपभोग करता है और उसे अत्यन्त व्यापक बनाता जाता है ॥ ७ ॥

पश्यन्त्यस्यां महात्मानः सुवर्णं पिप्पलाशनम् ।
उदासीनं ध्रुवं हंसं स्नातकाध्वर्यवो जगुः ॥ ८॥

महात्मा पुरुष सु-रूप (वर्ण) वाले इस जगत् रूप पीपल का फल खाते हैं और इस जगत् की माया में उस उदासीन परम पुरुष और परमहंस को ही देखते हैं। सभी स्नातक और अध्वर्युगण उसी का गान करते हैं ॥ ८ ॥

शंसन्तमनुशंसन्ति बह्वृचाः शास्त्रकोविदाः ।
रथन्तरं बृहत्साम सप्तवैधैस्तु गीयते ॥ ९॥

शास्त्रज्ञ-जन ऋचाओं के माध्यम से तथा स्तोता-जन (स्तुतियों के द्वारा) उसी परम पुरुष की स्तुति करते हैं और उसी के लिए रथन्तर संज्ञक तथा बृहत्साम का सप्तविध गान करते हैं ॥ ९ ॥

मन्त्रोपनिषदं ब्रह्म पदक्रमसमन्वितम् ।
पठन्ति भार्गवा ह्येते ह्यथर्वाणो भृगूत्तमाः ॥ १०॥

मन्त्रों का रहस्य ही ब्रह्म है, उसी को भृगुवंशी श्रेष्ठ ' भार्गव' लोग अथर्ववेदीय पद और क्रम के अनुसार पढ़ते हैं ॥ १० ॥

सब्रह्मचारिवृत्तिश्च स्तम्भोऽथ फलितस्तथा ।
अनड्वान्त्रोहितोच्छिष्टः पश्यन्तो बहुविस्तरम् ॥ ११॥

यह परम-पुरुष ब्रह्मचारी वृत्ति वाला, स्तम्भ के सदृश अटल, जगत् रूप में फलयुक्त, जगत् रूप शकट का वाहक, रजोगुण से रहित, सत्त्वगुण सम्पन्न तथा अत्यन्त व्यापक रूप में दिखाई देने वाला है ॥ ११ ॥

कालः प्राणश्च भगवान्मृत्युः शर्वो महेश्वरः ।
उग्रो भवश्च रुद्रश्च ससुरः सासुरस्तथा ॥ १२॥

(षडैश्वर्य सम्पन्न) यह परमपुरुष भगवान् कालरूप, प्राणरूप, मृत्युरूप, शर्वरूप, महेश्वररूप, भवरूप, रुद्ररूप, उग्ररूप, ससुर (देवयुक्त) तथा सासुर (असुरयुक्त) भी हैं ॥ १२ ॥

प्रजापतिर्विराट् चैव पुरुषः सलिलमेव च ।
स्तूयते मन्त्रसंस्तुत्यैरथर्वविदितैर्विभुः ॥ १३॥

वह परमदेव, प्रजापति, विराट् पुरुष और जलादि देवताओं के रूप में सबके लिए स्तुति करने योग्य है। अथर्ववेद द्वारा उसके व्यापक रूप का परिज्ञान होता है ॥ १३ ॥

तं षड्विंशक इत्येते सप्तविंशं तथापरे ।
पुरुषं निर्गुणं साङ्ख्यमथर्वशिरसो विदुः ॥ १४॥

कोई उसे छब्बीसवाँ तत्त्व कहते हैं, कोई सत्ताईसवाँ तत्त्व कहते हैं। अथर्वशिर (उपनिषद्) के ज्ञाता उसे निर्गुण सांख्यपुरुष कहते हैं ॥ १४ ॥

चतुर्विंशतिसंख्यातं व्यक्तमव्यक्तमेव च ।
अद्वैतं द्वैतमित्याहुस्त्रिधा तं पञ्चधा तथा ॥ १५॥

कोई उसे चौबीस संख्यक तत्त्वों वाला (सांख्य दर्शन), कोई उसे व्यक्त (जगत्) और कोई अव्यक्त (प्रकृति) मानते हैं। कोई उसे द्वैत (जीव-ब्रह्म) और कोई अद्वैत (ब्रह्म) मानते हैं। इसी प्रकार कोई उसे तीन रूपों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) वाला और कोई पाँच रूपों वाला (ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गौरी और गणेश) मानते हैं ॥ १५ ॥

ब्रह्माद्यं स्थावरान्तं च पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ।
तमेकमेव पश्यन्ति परिशुभ्रं विभुं द्विजाः ॥ १६॥

अनेक ज्ञान-दृष्टि सम्पन्न विद्वान् ब्रह्म (सबसे बड़ा तथा चैतन्य रूप) से लेकर जड़-पदार्थों तक में एक ही अतिशुभ्र (शुद्ध) व्यापक सर्वोच्च सत्ता को व्याप्त हुआ अनुभव करते हैं ॥ १६ ॥

यस्मिन्सर्वमिदं प्रोतं ब्रह्म स्थावरजङ्गमम् ।
तस्मिन्नेव लयं यान्ति स्रवन्त्यः सागरे यथा ॥ १७॥

यह सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत् उस ब्रह्म में ही समाया हुआ है। जिस प्रकार नदियाँ बहती हुई समुद्र में विलीन हो जाती हैं, उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् भी उस ब्रह्म में ही लय को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

यस्मिन्भावाः प्रलीयन्ते लीनाश्चाव्यक्ततां ययुः ।
पश्यन्ति व्यक्ततां भूयो जायन्ते बुद्बुदा इव ॥ १८॥

जिस प्रकार पानी का बुलबुला पानी से उत्पन्न होता है और पानी में ही लय हो जाता है; उसी प्रकार जिसमें सम्पूर्ण जीव-पदार्थ जन्म लेते हैं तथा जिसमें लय होकर अदृश्य हो जाते हैं, उसी को ज्ञानीजन ब्रह्म कहते हैं ॥ १८ ॥

क्षेत्रज्ञाधिष्ठितं चैव कारणैर्विद्यते पुनः ।
एवं स भगवान्देवं पश्यन्त्यन्ये पुनः पुनः ॥ १९॥

वह ' क्षेत्रज्ञ' रूप में सम्पूर्ण प्राणियों में अधिष्ठित होता है और वह कार्य के पीछे (समस्त) कारणों को जानने वाला होता है। ऐसे उस परम पुरुष को विद्वान् साधक बार-बार देखते हैं ॥ १९ ॥

ब्रह्म ब्रह्मेत्यथायान्ति ये विदुर्ब्राह्मणास्तथा ।
अत्रैव ते लयं यान्ति लीनाश्चाव्यक्तशालिनः ॥ ॥२०॥
इत्युपनिषत् ॥

जो विद्वान् (ब्रह्मवेत्ता) उस ब्रह्म को जानते हैं, वे उसी ब्रह्म में लीन हो जाते हैं, उसी में लय होकर वे अव्यक्त रूप से सुशोभित होते हैं, यह सुनिश्चित है। यही उपनिषद् है॥ २० ॥

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

शान्तिपाठ

॥ हरिः ॐ ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

वह परब्रह्म पूर्ण है और वह जगत ब्रह्म भी पूर्ण है, पूर्णता से ही पूर्ण उत्पन्न होता है। यह कार्यात्मक पूर्ण कारणात्मक पूर्ण से ही उत्पन्न होता है। उस पूर्ण की पूर्णता को लेकर यह पूर्ण ही शेष रहता है।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ इति मन्त्रिकोपनिषत् ॥

॥ मान्त्रिक उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥